6 नगर, व्यापारी और शिल्पीजन

एक मध्ययुगीन नगर की यात्रा पर आया कोई यात्री, उस नगर के बारे में कैसी आकांक्षाएँ रखता होगा? यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह नगर किस प्रकार का था–क्या वह एक मंदिर नगर था या एक प्रशासनिक केंद्र, एक वाणिज्यिक शहर, एक पत्तन नगर अथवा किसी अन्य प्रकार का शहर था। वस्तुत: कई नगर तो एक साथ अनेक प्रकार के थे–वे प्रशासनिक नगर तथा मंदिर नगर होने के साथ-साथ वाणिज्यिक कार्यकलापों और शिल्प उत्पादन के केंद्र भी थे।

मानचित्र 1
मध्य और दक्षिण भारत में व्यापार और शिल्पकारी उत्पादन के कुछ प्रमुख केंद्र

प्रशासनिक केंद्र

अध्याय 2 में आपने चोल वंश के बारे में पढ़ा। आइए, हम अपनी कल्पना के घोड़े पर सवार होकर चोल राजाओं की राजधानी तंजावूर, जैसाकि वह एक हज़ार वर्ष पहले था, की यात्रा पर चलें।

वर्ष में बारहों महीने बहने वाली कावेरी नदी इस सुंदर नगर के पास बहती है। राजा राजराज चोल द्वारा निर्मित राजराजेश्वर मंदिर की घंटियाँ बजती हुई सुनाई देती हैं। लोग नगर के वास्तुकार कुंजरमल्लन राजराज पेरूथच्चन की वास्तुकला की प्रशंसा करते हुए नहीं थकते। हमें वास्तुकार का नाम इसलिए पता है क्योंकि उसने गर्व से अपने नाम को मंदिर की दीवार पर उत्कीर्ण किया। मंदिर के भीतर एक विशाल शिवलिंग स्थापित है।

इस मंदिर के अलावा नगर में अनेक राजमहल हैं, जिनमें कई मंडप बने हुए हैं। राजा लोग इन मंडपों में अपना दरबार लगाते हैं। यहीं से वे अपने अधीनस्थों के लिए आदेश जारी करते हैं। नगर में सैन्य शिविर भी बने हैं।

नगर उन बाज़ारों की हलचल से भरा हुआ है; जहाँ अनाज, मसालों, कपड़ों और आभूषणों की बिक्री हो रही है। नगर के लिए जल की आपूर्ति कुँओं और तालाबों से होती है। तंजावूर और उसके निकटवर्ती नगर उरैयूर के सालीय बुनकर मंदिर के उत्सव के लिए झंडे-झंडियाँ बनाने का कपड़ा, राजा और अभिजात वर्ग के लिए बढ़िया सूती वस्त्र और जनसाधारण के लिए मोटा सूती वस्त्र तैयार कर रहे हैं। यहाँ से कुछ दूरी पर स्वामीमलाई में स्थपति अथवा मूर्तिकार उत्तम काँस्य मूर्तियाँ तथा लंबे, सुंदर घंटा-धातु के दीप बना रहे हैं।

?

आपके मत में लोग तंजावूर को एक महान नगर क्यों मानते थे?

मंदिर नगर और तीर्थ केंद्र

तंजावूर एक मंदिर नगर का भी उदाहरण है। मंदिर नगर नगरीकरण का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रतिरूप प्रस्तुत करते हैं। नगरीकरण नगरों के विकास की प्रक्रिया है। मंदिर अकसर समाज और अर्थव्यवस्था दोनों के लिए ही अत्यंत महत्त्वपूर्ण होते थे। शासक, विभिन्न देवी-देवताओं के प्रति अपना भक्ति भाव दर्शाने के लिए मंदिर बनाते थे। वे मंदिरों को भूमि एवं धन अनुदान में देते थे जिनकी आय से धार्मिक अनुष्ठान, विधि-विधान से संपन्न किए जाते थे, तीर्थयात्रियों तथा पुरोहित-पंडितों को भोजन कराया जाता था और पर्वोत्सव मनाए जाते थे। मंदिर के दर्शनार्थी भी दान-दक्षिणा दिया करते थे।

काँसा, घंटा-धातु और 'लुप्तमोम' तकनीक

काँसा एक मिश्रधातु होती है, जो ताँबे और राँगे (टिन) के मेल से बनती है। घंटा-धातु में राँगे का अनुपात किसी भी अन्य किस्म के काँसे से अधिक होता है। यह घंटे जैसी ध्वनि उत्पन्न करती है।

चोलकालीन कांस्य मूर्तियाँ (अध्याय-2 देखें) 'लुप्तमोम' तकनीक से बनाई जाती थीं। इस प्रविधि के अंतर्गत सर्वप्रथम मोम की एक प्रतिमा बनाई जाती थी। इसे चिकनी मिट्टी से पूरी तरह लीप कर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता था। जब वह पूरी तरह सूख जाती थी तो उसे गर्म किया जाता था और उसके मिट्टी के आवरण में एक छोटा-सा छेद बना कर उस छेद के रास्ते सारा पिघला हुआ मोम बाहर निकाल लिया जाता था। फिर चिकनी मिट्टी के खाली साँचे में उसी छेद के रास्ते पिघली हुई धातु भर दी जाती थी। जब वह धातु ठंडी होकर ठोस हो जाती थी, तो चिकनी मिट्टी के आवरण को सावधानीपूर्वक हटा दिया जाता था और उसमें से निकली प्रतिमा को साफ़ करके चमका दिया जाता था।

? *आपके विचार से इस प्रविधि के प्रयोग के क्या-क्या लाभ थे?*

चित्र 1
कांस्य मूर्ति, जिसमें कृष्ण को नाग-राक्षस कालिया को काबू करते दिखाया गया है।

मंदिर के कर्ता-धर्ता मंदिर के धन को व्यापार एवं साहूकारी में लगाते थे। शनैः शनैः, समय के साथ, बड़ी संख्या में पुरोहित-पुजारी, कामगार, शिल्पी, व्यापारी आदि मंदिर तथा उसके दर्शनार्थियों एवं तीर्थयात्रियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मंदिर के आस-पास बसते गए। इस प्रकार मंदिर नगरों का विकास हुआ। इसी रीति से मंदिरों के चारों ओर अनेक नगरों का आर्विभाव हुआ, जैसे–मध्य प्रदेश में भिल्लस्वामिन (भीलसा या विदिशा) और गुजरात में सोमनाथ। कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण मंदिर नगर–तमिलनाडु में कांचीपुरम तथा मदुरै और आंध्र प्रदेश में तिरुपति हैं।

तीर्थस्थल भी धीरे-धीरे नगरों के रूप में विकसित हो गए। वृंदावन (उत्तर प्रदेश) और तिरुवन्नमलाई (तमिलनाडु) ऐसे नगरों के दो उदाहरण हैं। अजमेर (राजस्थान), बारहवीं शताब्दी में चौहान राजाओं की राजधानी था और आगे चलकर मुग़लों के शासन में वह 'सूबा' मुख्यालय बन गया। यह नगर धार्मिक सह-अस्तित्व का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। सुप्रसिद्ध सूफ़ी संत ख्वाज़ा मुइनुद्दीन चिश्ती (अध्याय 8 भी देखें) यहाँ बारहवीं शताब्दी में बस गए थे और उनके दर्शनार्थी एवं श्रद्धालु सभी

अपने ज़िले के नगरों की सूची बनाएँ और उनका प्रशासनिक केंद्रों, मंदिर नगरों/तीर्थ केंद्रों के रूप में वर्गीकरण करें।

पंथों-मतों के हुआ करते थे। अजमेर के पास ही पुष्कर सरोवर है, जहाँ प्राचीनकाल से ही तीर्थयात्री आते रहे हैं।

छोटे नगरों का संजाल

आठवीं शताब्दी से ही उपहाद्वीप में अनेक छोटे-छोटे नगरों का संजाल-सा बिछने लगा था। संभवत: उनका प्रादुर्भाव बड़े-बड़े गाँवों से हुआ था। उनमें आमतौर पर एक मंडपिका (बाद में जिसे 'मंडी' कहा जाने लगा) होती थी, जहाँ आस-पास के गाँव वाले अपनी उपज बेचने के लिए लाते थे। उनमें ऐसी गलियाँ थी, जहाँ दुकानें एवं बाज़ार थे जिन्हें 'हट्ट' (बाद में 'हाट' कहा जाने लगा) कहा जाता था। इसके अलावा भिन्न-भिन्न प्रकार के कारीगरों तथा शिल्पियों, जैसे–कुम्हारों, तेलियों, शक्कर बनाने वालों, ताड़ी बनाने वालों, सुनारों, लोहारों, पत्थर तोड़ने वालों आदि के अलग-अलग बाज़ार होते थे। कुछ व्यापारी तो नगर में स्थायी रूप से बसकर अपना कारोबार करते थे, जबकि कुछ अन्य व्यापारी नगर-नगर घूमकर क्रय-विक्रय किया करते थे। आस-पास और दूरदराज़ के व्यापारी इन नगरों में स्थानीय उपज खरीदने और दूरवर्ती स्थानों के उत्पाद, जैसे–घोड़े, नमक, कपूर, केसर, पान-सुपारी और काली मिर्च जैसे मसाले बेचने के लिए आते थे।

चित्र 2
नगर का एक बाज़ार

आमतौर पर कोई सामंत यानी परवर्ती काल का ज़मींदार इन नगरों में या इनके आस-पास किलेबंदी कर महल बना लेता था। ऐसे सामंत व्यापारियों, शिल्पकारों तथा उनके व्यापार की वस्तुओं पर कर लगाते थे और कभी-कभी इन करों के संग्रहण का 'अधिकार' उन स्थानीय मंदिरों को 'प्रदान' कर देते थे, जिनका निर्माण स्वयं उनके द्वारा या धनाढ्य व्यापारियों द्वारा कराया गया होता था। ऐसे 'अधिकारों' का उल्लेख अभिलेखों में किया गया है जो आज भी पाए जाते हैं।

चित्र 3
लकड़ी पर नक्काशी करता हुआ एक कारीगर

बाज़ारों पर कर

यह राजस्थान से प्राप्त एक दसवीं शताब्दी के अभिलेख का सारांश है। जिसमें वे शुल्क दिए गए हैं जो मंदिर प्राधिकारियों द्वारा वस्तुओं के रूप में वसूल किए जा सकते हैं।

शक्कर और गुड़, रंग, धागा, रुई, नारियल, नमक, सुपारी, मक्खन, तिल के तेल पर और कपड़े पर कर लगाए जाते थे।

इसके अलावा, व्यापरियों पर, धातु की चीजें बेचने वालों, आसवकों, तेल, पशुचारे और अनाज के बोरों पर भी कर लगाए जाते थे।

इनमें से कुछ कर तो वस्तु रूप में और कुछ अन्य नकद रूप में वसूले जाते थे।

? *आज बाज़ार पर लगने वाले करों के बारे में कुछ और जानकारी प्राप्त करें–इन्हें कौन इकट्ठा करता है, वे किस प्रकार वसूल किए जाते हैं और उनका प्रयोग किस काम के लिए होता है।*

बड़े और छोटे व्यापारी

व्यापारी कई प्रकार के हुआ करते थे। उनमें बंजारे लोग (देखिए अध्याय 7) भी शामिल थे। कई व्यापारी, विशेष रूप से घोड़ों के व्यापारी अपने संघ बनाते थे, जिनका एक मुखिया होता था और वह मुखिया उनकी ओर से घोड़े खरीदने के इच्छुक योद्धाओं से बातचीत करता था।

चूँकि व्यापारियों को अनेक राज्यों तथा जंगलों से होकर गुज़रना पड़ता था। इसलिए वे आमतौर पर काफ़िले बनाकर एक साथ यात्रा करते थे और अपने हितों की रक्षा के लिए व्यापार-संघ (गिल्ड) बनाते थे। दक्षिण भारत

में आठवीं शताब्दी और परवर्ती काल में अनेक ऐसे संघ थे। उनमें सबसे प्रसिद्ध 'मणिग्रामम्' और 'नानादेशी' थे। ये व्यापार संघ प्रायद्वीप के भीतर और दक्षिण-पूर्व एशिया तथा चीन के साथ भी दूर-दूर तक व्यापार करते थे।

इनके अलावा चेट्टियार और मारवाड़ी ओसवाल जैसे समुदाय भी थे, जो आगे चलकर देश के प्रधान व्यापारी समूह बन गए। गुजराती व्यापारियों में हिंदू बनिया और मुस्लिम बोहरा दोनों समुदाय शमिल थे। वे दूर-दूर तक लाल सागर के बंदरगाहों व फ़ारस की खाड़ी, पूर्वी अफ्रीका, दक्षिण-पूर्व एशिया तथा चीन से व्यापार करते थे। वे इन पत्तनों में कपड़े और मसाले बेचते थे और बदले में अफ्रीका से सोना और हाथी दाँत एवं दक्षिण-पूर्व एशिया और चीन से मसाले, टिन, मिट्टी के नीले बर्तन और चाँदी लाते थे।

पश्चिमी तट के नगरों में अरबी, फ़ारसी, चीनी, यहूदी और सीरियाई ईसाई बस गए थे। लाल सागर के बंदरगाहों में बेचे जाने वाले भारतीय मसाले और कपड़े इतालवी व्यापारियों द्वारा खरीदे जाते थे और वहाँ से वे उन्हें आगे यूरोपीय बाज़ारों में पहुँचाते थे। उनसे व्यापार में बहुत लाभ होता था। उष्णकटिबंधीय जलवायु में उगाए जाने वाले मसाले (कालीमिर्च, दालचीनी, जायफल, सोंठ आदि) यूरोपीय व्यंजनों के महत्त्वपूर्ण अंग बन गए थे और भारतीय सूती कपड़ा बहुत लुभावना होता था। ये चीज़ें ही यूरोपीय व्यापारियों को भारत तक खींच लाईं। समय के साथ-साथ व्यापार और नगरों का रूप किस प्रकार बदला, इसके बारे में हम शीघ्र आगे पढ़ेंगे।

?

जैसा कि आप समझ सकते हैं, इस काल के दौरान लोगों तथा माल का आना-जाना लगा ही रहता था। आपके विचार से इस आवाजाही का नगरों तथा गाँवों के जन-जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा होगा? नगरों में रहने वाले कारीगरों की सूची बनाएँ।

काबुल

काबुल अपने पहाड़ी और विषम भू-दृश्य के साथ सोलहवीं शताब्दी से राजनीतिक और वाणिज्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बन गया। काबुल और कांधार सुप्रसिद्ध रेशम मार्ग से जुड़े हुए थे। साथ ही घोड़ों का व्यापार भी मुख्य रूप से इसी मार्ग से होता था। सत्रहवीं शताब्दी में हीरों के एक सौदागर जौं बेपटिस्टे टैवर्नियर ने अनुमान लगाया था कि काबुल में घोड़ों का व्यापार प्रतिवर्ष 30,000 रूपयों का होता था, जो उन दिनों में एक बड़ी भारी रकम समझी जाती थी। काबुल से मेवे, खजूर, गलीचे, रेशमी कपड़े और ताज़े फल ऊँटों पर लाद कर लाए जाते थे और उपमहाद्वीप तथा अन्य भागों में बेचे जाते थे। इनके अलावा गुलाम भी बिक्री के लिए लाए जाते थे।

नगरों में शिल्प

बीदर के शिल्पकार ताँबे तथा चाँदी में जड़ाई के काम के लिए इतने अधिक प्रसिद्ध थे कि इस शिल्प का नाम ही 'बीदरी' पड़ गया। पांचाल अर्थात् विश्वकर्मा समुदाय जिसमें सुनार, कसेरे, लोहार, राजमिस्त्री और बढ़ई शामिल थे; मंदिरों के निर्माण के लिए आवश्यक थे। इसके अलावा वे राजमहलों, बड़े-बड़े भवनों, तालाबों और जलाशयों के निर्माण में भी अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। इसी प्रकार सालियार या कैक्कोलार जैसे बुनकर भी समृद्धिशाली समुदाय बन गए थे और वे मंदिरों को भारी दान-दक्षिणा दिया करते थे। वस्त्र-निर्माण से संबंधित कुछ अन्य कार्य, जैसे–कपास को साफ़ करना, कातना और रंगना भी स्वतंत्र व्यवसाय बन गए थे, जिनके लिए विशेषज्ञता की आवश्यकता होती थी।

चित्र 4
पीतल के इस मोमबत्तीदान पर काला आवरण है।

चित्र 5
शॉल का बॉर्डर

शहरों के बदलते हुए भाग्य

कई शताब्दियों के लंबे समय में अहमदाबाद (गुजरात) जैसे कुछ नगर बड़े व्यापारिक केंद्रों के रूप में विकसित हो गए, लेकिन तंजावूर जैसे कुछ अन्य नगर पहले की अपेक्षा विस्तार तथा महत्त्व की दृष्टि से सिकुड़ गए। इसी काल में पश्चिम बंगाल में भागीरथी नदी के तट पर स्थित मुर्शिदाबाद रेशमी वस्त्रों के प्रमुख केंद्र के रूप में उभरा था। वह 1704 ई. में बंगाल की राजधानी बन गया लेकिन इसी शताब्दी के दौरान उसका सितारा डूब गया; क्योंकि वहाँ के बुनकर इंग्लैंड की मिलों से बनकर आए सस्ते कपड़े के साथ प्रतियोगिता में टिक न सके।

हम्पी, मसूलीपट्टनम और सूरत – नज़दीक से एक नज़र

हम्पी की वास्तुकला का सौंदर्य

हम्पी नगर, कृष्णा और तुंगभद्रा नदियों की घाटी में स्थित है। यह नगर 1336 में स्थापित विजयनगर साम्राज्य का केंद्र स्थल था। हम्पी के शानदार खंडहरों से पता चलता है कि उस शहर की किलेबंदी उच्च कोटि की थी। किले की दीवारों के निर्माण में कहीं भी गारे-चूने जैसे किसी भी जोड़ने वाले मसाले का प्रयोग नहीं किया गया था और शिलाखंडों को आपस में फँसाकर गूँथा गया था।

चित्र 6
हम्पी के अहाते की टूटी हुई दीवार से बुर्ज का दृश्य

एक किलाबंद नगर

एक पुर्तगाली यात्री डोमिंगों पेज़ ने सोलहवीं शताब्दी में हम्पी नगर का वर्णन इस प्रकार किया:

...गोवा से आने वाले लोग जिस प्रवेश द्वार से गुज़रते हैं उस द्वार के भीतर राजा ने एक अत्यंत सुदृढ़ प्राचीरबद्ध नगर बसा रखा है; जो दीवारों और बुर्जों से सुरक्षित है। ये दीवारें अन्य नगरों की दीवारों जैसी नहीं हैं, बल्कि बहुत मज़बूत राजगीरी का ऐसा नमूना हैं; जो अन्य भागों में बहुत कम देखने को मिलेगा। उसके भीतर उसी रीति से बनाए गए भवनों की अत्यंत सुंदर कतारें हैं, जिनकी छतें सपाट चपटी हैं।

आपके विचार से यही नगर किलेबंद क्यों था?

अपने शासन काल में विजयनगर के शासकों ने जलाशयों एवं नहरों के निर्माण में काफी रुचि ली। मालदेवी नदी के ऊपर 1.37 किमी. लम्बे मिट्टी के बाँध वाले अनंतराज सागर जलाशय का निर्माण हुआ। कृष्णदेव राय ने दो पहाड़ियों के बीच एक विशाल प्रस्तर बांध का निर्माण विजयनगर के निकट एक विशाल झील के निर्माण के लिए किया जहाँ से जल को जलसेतु और नहरों द्वारा बगीचों और खेतों तक सिंचाई के लिए पहुँचाया जाता था।

हम्पी की वास्तुकला विशिष्ट प्रकार की थी। वहाँ के शाही भवनों में भव्य मेहराब और गुंबद थे। वहाँ स्तंभों वाले कई विशाल कक्ष थे, जिनमें मूर्त्तियों को रखने के लिए आले बने हुए थे। वहाँ सुनियोजित बाग-बगीचे भी थे, जिनमें कमल और टोडों की आकृति वाले मूर्तिकला के नमूने थे। पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दियों के अपने समृद्धिकाल में हम्पी कई वाणिज्यिक और सांस्कृतिक गतिविधियों से गुंजायमान रहता था। उन दिनों हम्पी के बाज़ारों में मुस्लिम सौदागरों, चेट्टियों और पुर्तगालियों जैसे यूरोपीय व्यापारियों के एजेंटों का जमघट लगा रहता था।

चित्र 7
हम्पी के विठ्ठल मंदिर का पत्थर का बना रथ

मंदिर सांस्कृतिक गतिविधियों के केंद्र होते थे और देवदासियाँ विरूपाक्ष (शिव) मंदिर के अनेक स्तंभ वाले विशाल कक्षों में देव प्रतिमा, राजा तथा प्रजाजनों के समक्ष नृत्य किया करती थीं। महानवमी पर्व, जो आज दक्षिण में नवरात्रि पर्व कहलाता है, उन दिनों हम्पी में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पर्व माना जाता था। पुरातत्त्वविदों ने उस महानवमी मंच को खोज निकाला है, जहाँ राजा अपने अतिथियों का स्वागत-सत्कार करता

था और अधीनस्थ व्यक्तियों से नज़राने-उपहार लिया करता था। वहीं विराजमान होकर राजा, नृत्य एवं संगीत तथा मल्लयुद्ध के कार्यक्रम भी देखा करता था।

1565 में दक्कनी सुल्तानों–गोलकुंडा, बीजापुर, अहमदनगर, बरार और बीदर के शासकों–के हाथों विजयनगर की पराजय के बाद हम्पी का विनाश हो गया।

सूरत – पश्चिम का प्रवेश द्वार

वाणिज्य केंद्र
एक ऐसा स्थान जहाँ विभिन्न उत्पादन केंद्रों से आने वाला माल खरीदा और बेचा जाता है।

सूरत, मुग़लकाल में कैंबे (आज के खंबात) और कुछ समय बाद के अहमदाबाद के साथ-साथ, गुजरात में पश्चिमी व्यापार का वाणिज्य केंद्र बन गया। सूरत ओरमुज़ की खाड़ी से होकर पश्चिमी एशिया के साथ व्यापार करने के लिए मुख्य द्वार था। सूरत को मक्का का प्रस्थान द्वार भी कहा जाता था, क्योंकि बहुत-से हज़यात्री, जहाज़ से यहीं से रवाना होते थे।

सूरत एक सर्वदेशीय नगर था, जहाँ सभी जातियों और धर्मों के लोग रहते थे। सत्रहवीं शताब्दी में वहाँ पुर्तगालियों, डचों और अँग्रेज़ों के कारखाने एवं मालगोदाम थे। अँग्रेज़ इतिहासकार ओविंगटन ने 1689 में सूरत बंदरगाह का वर्णन करते हुए लिखा है कि किसी भी एक वक्त पर भिन्न-भिन्न देशों के औसतन एक सौ जहाज़ इस बंदरगाह पर लंगर डाले खड़े देखे जा सकते थे।

हुंडी
एक ऐसा दस्तावेज़, जिसमें एक व्यक्ति द्वारा जमा कराई गई रकम दर्ज रहती है। हुंडी को कहीं अन्यत्र प्रस्तुत करके जमा की गई राशि प्राप्त की जा सकती है।

सूरत में ऐसी अनेक दुकानें थीं जो सूती कपड़ा, थोक और फुटकर कीमतों पर बेचती थीं। सूरत के वस्त्र अपने सुनहरे गोटा-किनारियों (ज़री) के लिए प्रसिद्ध थे और उनके लिए पश्चिम एशिया, अफ़्रीका और यूरोप में बाज़ार उपलब्ध थे। राज्य ने विश्व के सभी भागों से नगर में आने वाले लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनेक विश्रामगृह बना रखे थे। वहाँ भव्य भवन और असंख्य मनोरंजक-स्थल थे। सूरत में काठियावाड़ी सेठों तथा महाजनों की बड़ी-बड़ी साहूकारी कंपनियाँ थीं। उल्लेखनीय है कि सूरत से जारी की गई **हुंडियों** को दूर-दूर तक मिस्र में काहिरा, इराक में बसरा और बेल्जियम में एंटवर्प के बाज़ारों में मान्यता प्राप्त थी।

किंतु, सत्रहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में सूरत का भी अध:पतन प्रारंभ हो गया। इसके कई कारण थे–मुग़ल साम्राज्य के पतन के कारण बाज़ारों

तथा उत्पादकता की हानि, पुर्तगालियों द्वारा समुद्री मार्गों पर नियंत्रण और बंबई (वर्तमान मुंबई) से प्रतिस्पर्धा जहाँ 1668 में अँग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपना मुख्यालय स्थापित कर लिया था। आज सूरत एक महत्त्वपूर्ण वाणिज्यिक केंद्र है।

जोखिम-भरा दौर – मसूलीपट्टनम के लिए चुनौती

मसूलीपट्टनम या मछलीपट्टनम नगर कृष्णा नदी के डेल्टा पर स्थित है। सत्रहवीं शताब्दी में यह भिन्न-भिन्न प्रकार की गतिविधियों का नगर था।

हॉलैंड और इंग्लैंड दोनों देशों की ईस्ट इंडिया कंपनियों ने मसूलीपट्टनम पर नियंत्रण प्राप्त करने का प्रयत्न किया, क्योंकि तब तक वह आंध्र तट का सबसे महत्त्वपूर्ण पत्तन बन गया था। मसूलीपट्टनम का किला, हॉलैंडवासियों ने बनाया था।

मछुआरों का एक गरीब नगर

अँग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कंपनी के एक **गुमाश्ते** विलियम मेथवल्ड ने 1620 ई० में इन शब्दों में मसूलीपट्टनम का वर्णन किया था :

यह गोलकुंडा का मुख्य पत्तन है, जहाँ परमपूज्य ईस्ट इंडिया कंपनी अपना एजेंट रखती है। यह एक छोटा नगर है, पर घना बसा हुआ, बिना किसी चारदीवारी के, और खराब तरीके से बना हुआ। न ही यह अच्छी जगह स्थित है। इसके सभी जलस्रोत खारे पानी के हैं। पहले यह एक गरीब मछुआरा-नगर था... आगे चलकर यहाँ जहाज़ों के लिए लंगर डालने की सुविधा हो गई, जिससे व्यापारी लोग यहाँ रहने लगे और चूँकि हमारे तथा हॉलैंड के निवासी यहाँ इस तट पर आते-जाते रहते हैं, यह उनके लिए निवास की व्यवस्था करता है।

? *अँग्रेज़ों और हॉलैंडवासियों ने मसूलीपट्टनम में अपनी बस्तियाँ बसाने का निर्णय क्यों लिया?*

गुमाश्ता
यूरोपीय ट्रेडिंग कंपनी की व्यापारिक गतिविधियों के प्रभारी अधिकारी

गोलकुंडा के क़ुत्बशाही शासकों ने कपड़ों, मसालों और अन्य चीज़ों की बिक्री पर शाही एकाधिकार लागू किया; जिससे कि वहाँ का व्यापार पूरी तरह ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथों में न चला जाए। विभिन्न व्यापारी

समूहों–गोलकुंडा के कुलीन वर्गों, फ़ारसी सौदागरों, तेलुगु कोमटी चेट्टियार और यूरोपीय व्यापारियों ने नगर को घनी आबादी वाला और समृद्धिशाली बना दिया। जब मुग़लों ने गोलकुंडा तक अपनी शक्ति बढ़ा ली, तो उनके प्रतिनिधि सूबेदार मीर जुमला ने, जो कि स्वयं एक सौदागर था, हालैंडवासियों और अँग्रेज़ों को आपस में भिड़ाना शुरू कर दिया। 1686-87 में मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब ने गोलकुंडा को मुग़ल साम्राज्य में मिला लिया।

अब यूरोपीय कंपनियों के सामने अन्य विकल्प ढूँढने की समस्या आ खड़ी हुई। कंपनी की नई नीति के अंतर्गत केवल इतना ही पर्याप्त नहीं था कि पत्तन, भीतरी प्रदेश के उत्पादन केंद्रों के साथ संबंध बनाए रखें; बल्कि इस बात की भी आवश्यकता महसूस की गई कि कपंनी के नए केंद्र एक साथ राजनीतिक, प्रशासनिक तथा वाणिज्यिक भूमिकाएँ भी अदा करें। जब कंपनी के व्यापारी, बंबई (वर्तमान मुंबई) कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) और मद्रास (वर्तमान चेन्नई) चले गए, तब मसूलीपट्टनम अपने व्यापार और समृद्धि दोनों ही खो बैठा और अठारहवीं शताब्दी के दौरान उसका अध:पतन हो गया और आज वह एक छोटे-से जीर्ण-शीर्ण नगर से अधिक कुछ नहीं है।

नए नगर और व्यापारी

सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में यूरोप के देश, व्यापारिक उद्देश्यों से मसालों और कपड़ों की तलाश में लगे हुए थे; जो यूरोप और पश्चिमी एशिया, दोनों जगह लोकप्रिय हो गए थे। अँग्रेज़ों, हॉलैंडवासियों और फ्रांसीसियों ने पूर्व में अपनी वाणिज्यिक गतिविधियों का विस्तार करने के लिए अपनी-अपनी ईस्ट इंडिया कंपनी बनाईं। प्रारंभ में तो मुल्ला अब्दुल गफ़ूर और वीरजी वोरा जैसे कुछ बड़े भारतीय व्यापारियों ने जिनके पास बड़ी संख्या में जहाज़ थे, उनका मुकाबला किया। किंतु यूरोपीय कंपनियों ने समुद्री व्यापार पर अपना नियंत्रण स्थापित करने के लिए अपनी नौ-शक्ति का प्रयोग किया और भारतीय व्यापारियों को अपने एजेंट के रूप में कार्य करने के लिए मज़बूर कर दिया। अंतत: अँग्रेज़, उपमहाद्वीप में सर्वाधिक सफल वाणिज्यिक एवं राजनीतिक शक्ति के रूप में उभरकर स्थापित हो गए।

वस्त्रों जैसी वस्तुओं की माँग में तेज़ी आ जाने से अधिकाधिक लोगों ने कताई, बुनाई, धुलाई, रंगाई आदि का धंधा अपना लिया। इससे इन शिल्पों का बहुत विस्तार हुआ। भारतीय वस्त्रों के रूप-रंग और डिज़ाइन अधिकाधिक

परिष्कृत होते गए, किंतु इस काल में शिल्पकारों की स्वतंत्रता घटने लगी। शिल्पीजन पेशगी की प्रणाली पर काम करने लगे, जिसका अर्थ यह था कि उन्होंने जिन यूरोपीय एजेंटों से पहले ही पेशगी ले ली थी, उन्हीं के लिए उन्हें कपड़ा बुनना होता था। अब बुनकरों को अपना कपड़ा या बुनाई के नमूने बेचने की स्वतंत्रता नहीं थी। उन्हें तो कंपनी के एजेंटों द्वारा निर्धारित डिज़ाइन के कपड़े उन्हीं की माँग के अनुसार बनाने पड़ते थे।

अठारहवीं शताब्दी में बंबई, कलकत्ता और मद्रास नगरों का उदय हुआ, जो आज प्रमुख महानगर हैं। शिल्प और वाणिज्य में बड़े-बड़े परिवर्तन आए, जब बुनकर जैसे कारीगर तथा सौदागर यूरोपीय कंपनियों द्वारा इन नए नगरों में स्थापित 'ब्लैक टाउन्स' में स्थानांतरित हो गए। 'ब्लैक' यानी देसी व्यापारियों और शिल्पकारों को इन 'ब्लैक टाउन्स' में सीमित कर दिया गया, जबकि गोरे शासकों ने मद्रास में फ़ोर्ट सेंट जॉर्ज और कलकत्ता में फ़ोर्ट सेंट विलियम की शानदार कोठियों में अपने आवास बनाए। अठारहवीं शताब्दी में शिल्पकलाओं तथा वाणिज्य की कहानी हम अगले वर्ष पढ़ेंगे।

चित्र 8
प्रारंभिक उन्नीसवीं शताब्दी में बंबई की एक सड़क

अन्यत्र

वास्को-डि-गामा और क्रिस्टोफ़र कोलंबस

पंद्रहवीं शताब्दी में यूरोपीय नाविकों द्वारा समुद्री मार्ग खोजने के अभूतपूर्व कार्य किए गए। उनमें से अनेक नाविक भारतीय उपमहाद्वीप तक पहुँचने का मार्ग खोजने और मसाले प्राप्त करने की इच्छा से प्रेरित थे।

पुर्तगाली नाविक वास्को-डि-गामा अटलांटिक महासागर के साथ-साथ यात्रा करते हुए केप ऑफ गुड होप से निकलकर और हिंद महासागर को पार करके भारत पहुँचा। उसे अपनी पहली यात्रा को पूरा करने में एक वर्ष से भी अधिक समय लगा। वह 1498 में कालीकट पहुँचा और अगले वर्ष पुर्तगाल की राजधानी लिस्बन लौट गया। इस समुद्री यात्रा के दौरान उसके चार में से दो जहाज़ नष्ट हो गए और 170 यात्रियों में से केवल 54 ही जीवित बचे। इन प्रत्यक्ष खतरों के बावजूद जो मार्ग खोले या खोजे गए, वे अत्यंत लाभकारी सिद्ध हुए और उसके बाद तो अँग्रेज़, हॉलैंडवासी और फ्रांसीसी नाविकों ने भी उसका अनुकरण करना प्रारंभ कर दिया।

चित्र 9
वास्को-डि-गामा

भारत पहुँचने के लिए समुद्री मार्गों की खोज का एक अन्य सुपरिणाम निकला, जिसकी किसी को आशा नहीं थी। एक इटलीवासी क्रिस्टो.फर कोलंबस ने भारत पहुँचने का मार्ग खोजने के लिए अटलांटिक महासागर को पार करके पश्चिम की ओर यात्रा करने का निश्चय किया। उसका सोचना था कि चूँकि पृथ्वी गोल है, इसलिए वह पश्चिम की ओर से भी भारत पहुँच सकता है। वह 1492 में वेस्टइंडीज के तट पर पहुँचा (वेस्टइंडीज का नाम इसी भ्रांति के कारण पड़ा)। उसके पीछे स्पेन और पुर्तगाल के नाविक और विजेता भी वहाँ आते रहे और उन्होंने मध्य और दक्षिणी अमेरिका के बड़े-बड़े भागों को अपने कब्ज़े में कर लिया और अकसर उन प्रदेशों की पहले वाली बस्तियों को नष्ट कर दिया।

कल्पना करें

आप सत्रहवीं शताब्दी में सूरत से पश्चिमी एशिया की यात्रा करने की योजना बना रहे हैं। इस संबंध में आप कैसी तैयारियाँ करेंगे?

फिर से याद करें

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :

   (क) राजराजेश्वर मंदिर ———————— में बनाया गया था।

   (ख) अजमेर सूफ़ी संत ———————— से संबंधित है।

   (ग) हम्पी ———————— साम्राज्य की राजधानी थी।

   (घ) हॉलैंडवासियों ने आंध्र प्रदेश में ———————— पर अपनी बस्ती बसाई।

2. बताएँ क्या सही है और क्या गलत :

   (क) हम राजराजेश्वर मंदिर के मूर्तिकार (स्थपति) का नाम एक शिलालेख से जानते हैं।

   (ख) सौदागर लोग काफ़िलों में यात्रा करने की बजाय अकेले यात्रा करना अधिक पसंद करते थे।

   (ग) काबुल हाथियों के व्यापार का मुख्य केंद्र था।

   (घ) सूरत बंगाल की खाड़ी पर स्थित एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक पत्तन था।

3. तंजावूर नगर को जल की आपूर्ति कैसे की जाती थी?

4. मद्रास जैसे बड़े नगरों में स्थित 'ब्लैक टाउन्स' में कौन रहता था?

बीज शब्द

मंदिर नगर

नगरीकरण

विश्वकर्मा

वाणिज्य केंद्र

'ब्लैक टाउन'

आइए समझें

5. आपके विचार से मंदिरों के आस-पास नगर क्यों विकसित हुए?

6. मंदिरों के निर्माण तथा उनके रख-रखाव के लिए शिल्पीजन कितने महत्वपूर्ण थे?

7. लोग दूर-दूर के देशों-प्रदेशों से सूरत क्यों आते थे?

8. कलकत्ता जैसे नगरों में शिल्प उत्पादन तंजावूर जैसे नगरों के शिल्प उत्पादन से किस प्रकार भिन्न था?

आइए विचार करें

9. इस अध्याय में वर्णित किसी एक नगर की तुलना आप, अपने परिचित किसी कस्बे या गाँव से करें? क्या दोनों के बीच कोई समानता या अंतर हैं?

10. सौदागरों को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता था? आपके विचार से क्या वैसी कुछ समस्याएँ आज भी बनी हुई हैं?

आइए करके देखें

11. तंजावूर या हम्पी के वास्तुशिल्प के बारे में कुछ और जानकारी प्राप्त करें और इन नगरों के मंदिरों तथा अन्य भवनों के चित्रों की सहायता से एक स्क्रैपबुक तैयार करें।

12. किसी वर्तमान तीर्थस्थान का पता लगाएँ। बताएँ कि लोग वहाँ क्यों जाते हैं, वहाँ क्या करते हैं, क्या उस केंद्र के आस-पास दुकानें हैं और वहाँ क्या खरीदा और बेचा जाता है?